Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 20, Issue No. 2, April-2023, ISSN 2230-7540

भारत में मानवाधिकार संरक्षण: यथार्थपरक अनुचिंतन

डॉ. अविनाश शर्मा[1]*, डॉ. गरिमा सिहाग[2]

[1,2] सहायक आचार्य (लोक प्रशासन), राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.)

ई-मेल avi147.as@gmail.com

***सार** - सम्प्रति वैष्विक परिदृष्य में मानवाधिकार आंदोलन ने अपनी सशक्त उपस्थिति के साथ-साथ एक यथार्थपरक अनुचिंतन भी प्रस्तुत किया है। 10 दिसम्बर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र की विष्वव्यापी मानवाधिकारों की घोषणा को भारत सहित सदस्य देशों ने स्वीकारा, किन्तु 20वीं सदी के अंतिम दशक में मानवाधिकारों के प्रति वास्तविक हलचल परिलक्षित हुई है। यदि हम भारतीय संदर्भ में देखें तो यहां मानवाधिकारों का हनन होना एक सामान्य परिघटना है। भारत में सन् 1993 में निर्मित मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम के माध्यम से राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग तथा विभिन्न राज्यों में गठित राज्य मानवाधिकार आयोगों के माध्यम से देश में आम नागरिक के उन अधिकारों की सुरक्षा एवं संवर्द्धन करना है जो किसी व्यक्ति के गरिमापूर्ण जीवन जीने हेतु अपरिहार्य है।*

***सारतः** मानवाधिकारों से आशय उन नैसर्गिक एवं मौलिक मानवीय अधिकारों से है, जो किसी व्यक्ति के सम्मानजनक जीवन जीने के लिए नितांत आवष्यक है, अतः मानवाधिकार हनन को रोकने हेतु विविध एवं बहुआयामी संरक्षण की दिशा में अनुचिंतन किया जाना अपेक्षित है।*

***मुख्य शब्द** - मानवाधिकार, अनुचिंतन, मानवाधिकार संरक्षण, गरिमापूर्ण जीवन, विष्वव्यापी मानवाधिकार घोषणा, मानवाधिकार हनन, नैसर्गिक अधिकार।*

----------X----------

प्रस्तावना

शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोधालेख मूलतः भारत में मानवाधिकार का वास्तविक स्थिति, हनन एवं उनके विधिक संरक्षण तथा यथार्थपरक अनुचिंतन पर आधारित है।

मानव सभ्यता एवं संस्कृति के उत्तरोत्तर विकास के साथ-साथ मानव समाज में शोषण एवं अत्याचारों का भी बोलबाला रहा है। राजनीतिशास्त्री रूसों के कथानानुसार ''मनुष्य स्वतंत्र जन्मा है, किन्तु वह सर्वत्र जंजीरों से जकड़ा हुआ है।'' यह जंजीर रूपी बंधन विविध आयामी यथा-सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, नैतिक एवं विधिक इत्यादि प्रकार का हो सकता है।

कालांतर में इंग्लैण्ड, फ्रांस एवं रूसी क्रांति से शोषक-शोषित के मध्य संघर्ष रहा है। भारत में ब्रिटिश काल में अंग्रेजों की दासता तत्पष्चात् भारतीय समाज छूआछूत, ऊँच-नीच, बंधुआ श्रम, सती प्रथा, रूढ़िवादिता इत्यादि से ग्रस्त रहा है। अन्ततः सन् 1947 में भारत स्वतंत्र हुआ तथा भारतीय संविधान में मूल अधिकारों को स्थान दिया गया। वस्तुतः दो शब्दों मानव अधिकार के संयोजन से मानवाधिकार शब्द बना है, जो इस मान्यता पर टिका है कि समानता, स्वतंत्रता, सम्मान एवं नैसर्गिक न्याय के साथ जीने हेतु जो आवष्यक परिस्थितियॉ चाहिए वे मानव के अधिकार है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अनुसार मानवाधिकार से आशय जीवन, स्वतंत्रता, समानता और व्यक्ति की गरिमा जैसे अधिकारों से है। इस प्रकार मानवाधिकार एक व्यापक एवं बहुआयामी अवधारणा है, जो प्रत्येक नागरिक के लिए अनिवार्य हैं। इसी क्रम में 10 दिसम्बर, 1948 को विष्व की ससंद के समरूप निकाय संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा मानवाधिकारों को विष्वव्यापी घोषणा को स्वीकारा गया। यही कारण है कि प्रतिवर्ष 10 दिसम्बर को विष्व

www.ignited.in

मानवाधिकार दिवस मनाया जाता है। उक्त घोषणा में प्रस्तावना सहित कुल 30 अनुच्छेद है।

भारत में राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 {1994 का अधिनियम सं. 10 (8 जनवरी, 1994)} निर्मित है जो मानव के जीवन, स्वतंत्रता, समानता तथा गरिमा से युक्त जीवन जीने के अधिकार का संरक्षण एवं संवर्द्धन करता है। इसी अधिनियम के अनुसरण में उच्चतम न्यायालय के सेवानिवृत मुख्य न्यायमूर्ति की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय मानवाधिकार संरक्षण आयोग का गठन किया जाता है। यह आयोग स्वप्रेरित संज्ञान या पीड़ित द्वारा प्रस्तुत वाद पर मानवाधिकारों के हनन या अपषमन की षिकायत की जॉच करता है। आयोग को सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के अनुसरण में दीवानी न्यायालय को समस्त शक्तियॉ प्राप्त है।

इसी प्रकार विभिन्न राज्यों में राज्य मानवाधिकार आयोग कार्यरत है जो राज्य स्तरीय मानवाधिकार संबंधी शिकायतों की जॉच कर संबंधित विभाग को कार्यवाही हेतु अग्रेषित करता है। प्रश्न यह उठता है कि आखिर मानवाधिकार आयोग की आवष्यकता क्यों है, जबकि न्यायालय एवं पुलिस तंत्र विद्यमान है। इसके मूल में निम्नांकित कारण चिंतनीय है:-

1. भारत जैसे विशाल देश की समस्याएँ भी विषाल है, अतः कानूनों का उल्लंघन भी अधिक है।
2. यद्यपि उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय मूल अधिकारों का संरक्षक है, तथापि ऐसे विभिन्न मामलें हैं जो मूल अधिकारों की श्रेणी में नहीं है।
3. भारतीय न्यायालय कार्य के बोझ से ग्रस्त है, अतः मानवाधिकार संरक्षक हेतु पृथक् आयोग आवष्यक है।
4. स्वतंत्र, शक्ति सम्पन्न तथा वैधानिक निकाय होने के नाते आयोग निष्पक्ष एवं त्वरित जॉच कर सकता है।
5. मीडिया, आमजन, सोशल मीडिया तथा संचार माध्यमों की पुरजोर मांग थी कि मानवाधिकार आयोग स्थापित हो।
6. वैष्विक दबाव भी मानवाधिकार आयोग की स्थापना में सहायक बना।
7. रक्षक ही भक्षक अर्थात् पुलिस की दमनकारी छवि से मुक्ति पाने हेतु आयोग की स्थापना जरूरी थी।

निष्कर्षत भारत में मानवाधिकारों की स्थिति न तो संतोषजनक है और न ही गर्व करने लायक है।

शोध के उद्देश्य

1. प्रत्येक नागरिक को उसके जीवन जीने के मूल एवं नैसर्गिक अधिकार की सुरक्षा करना शोध का प्रमुख उद्देष्य है।
2. भारत के संविधान की प्रस्तावना में समानता, भातृत्व एवं न्याय के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अधिकारों का सम्मान करना।
3. संविधान के भाग 4 में उल्लेखित अनुच्छेद 36-51 में वर्णित नीति निदेशक तत्वों की अनुपालना मानव कल्याण के हित में सुनिष्चित करना।
4. संयुक्त राष्ट्र महासभा की मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा का क्रियान्वयन सुनिष्चित करना।
5. इस बात का प्रण करना कि षोधार्थी के अध्ययन का मूल उद्देश्य रहा है कि हम मन, वचन एवं व्यवहार से मानवाधिकार की सुरक्षा करें तथा समयानुसार समीक्षा करते रहे।

परिकल्पना

शोधार्थी के मनोमस्तिष्क में जिन अनुत्तरित प्रष्नों एवं विचारों की व्याख्या किया जाना अपेक्षित है, वे मानवाधिकार संरक्षण के संदर्भ में इस प्रकार है:-

1- सम्प्रति मानवाधिकार उल्लघंन की समस्या वैष्विक एवं गंभीर समस्या है, अतः व्यक्तिगत, देशगत एवं वैष्विक त्रिस्तरीय प्रयासों की आवष्यकता है।

2- ढोंगी जीवन, महास्वार्थी, छद्म राष्ट्रप्रेम से ग्रस्त तथा मानवीय संवेदनाओं से कोसों दूर अधिसंख्य भारतीयों के लिए धरातलीय चिंतन किस दिषा में हो।

3- क्या एक आम भारतीय जाति, धर्म, वर्ग, श्रेणी से ऊपर उठकर मानव को मानव नहीं समझ सकता है।

4- जितना व्यक्ति को उच्च प्रस्थिति एवं पदस्थिति होगी, वह उतना ही स्वयं को श्रेष्ठ तथा अन्य मानव को निम्न समझने की भूल कर बैठता है।

शोधप्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र मूलतः शोधार्थी के व्यक्तिगत जीवनानुभवों तथा द्वितीयक सूचना स्रोतों पर आधारित है। शोधालेख की वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने हेतु शासकीय एवं अषासकीय संस्थाओं द्वारा प्रकाशत दस्तावेज, सांख्यिकी, आदेश, सूचना, संविधान एवं अधिनियमों का आश्रय लिया गया है।

1- मानवाधिकार संरक्षणः यथार्थपरक भारतीय अनुचिंतन

2- भारत में मानवाधिकारों का उल्लघंन सनातन काल से ही चला आ रहा है। निःसंदेह भारत में मानवाधिकारों की स्थिति दयनीय एवं असंतोशजनक रही है। मानवाधिकार भारतीय समाज, दूषित राजनीति, पुलिस की नकारात्मक छवि तथा स्वार्थ लोलुपता के संदर्भ में कतिपय प्रमुख अनुचिंतन इस प्रकार है

3- भारत में मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के अंतर्गत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन हुआ, किन्तु अभी भी राज्यों में आयोग की गति मंथर रही है। यथा- हिमाचल प्रदेष सरकार ने सन् 2002 में राज्य मानवाधिकार आयोग को ही भंग कर दिया।

4. मानवाधिकारों आयोग की पदस्थिति एक परामर्षदात्री निकाय की है, अतः यह संस्था अल्पप्रभावी है।

5. मानव के समग्र कल्याण हेतु संविधान में वर्णित नीति निदेषक तत्वों की अनुपालना शत-प्रतिशत सुनिष्चित नहीं हो पा रहा है।

6. भारतीय न्याय प्रणाली महँगी, मंथर, लंबितवाद तथा उलझन से युक्त है। बहुधा निर्दोष व्यक्ति भी गुनहगार बन जाता है।

7. सजायाफ्ता महिला कैदी के मासूम बच्चों को भी जेल में रहना पड़ता है। प्रष्न यह उठता है कि अबोध बालक को किस अपराध की सजा मिली है।

8. मानवाधिकारों की महज सैद्धान्तिक व्याख्या ही न हो वरन मानवीय पहलुओं को भी दृष्टिगत रखा जाना चाहिए।

9. विकासषील राष्ट्रों में संतानोत्पत्ति एक कुटीर उद्योग बन चुका है। चूंकि एक जानबूझकर सुनियोजित ढ़ंग से एक बच्चे को उसके माता-पिता इस लौकिक संसार में लाते है, अतः बच्चे का उचित ढ़ंग से लालन-पालन न करना क्या उसके मानवाधिकारों का हनन नहीं है।

10. भारत में साहब संस्कृति का बोलबाला है। निम्नतम पद एवं उच्चतम पदधारक, वेतनमान में बड़ा अंतर विद्यमान है।

11. हमारे यहा देषभक्ति से आषय सेवा से है जबकि खतरनाक मसुंबों से निपटने वाला पत्रकार, गुंडों से दो-दो चार-चार हाथ होने वाला पुलिसकर्मी, रोगी की सेवा सुश्रुषा करता चिकित्सक तथा सामाजिक कार्यकर्ता को देषभक्त नहीं माना जाता है। क्या यह विसंगति मानवाधिकार का उल्लंघन नहीं है।

12. मुक्केबाजी जैसा खेल आदिम युग की बर्बरता की निषानी है। एक व्यक्ति बिना बात दूसरे पर ताबड़तोड़ प्रहार करता है तथा दर्षकगण आंनदित हो उठते है तो हमें मानव के अंदर के दानव को भलीभांति समझा लेना चाहिए।

13. भारत में हमें सदैव से यह नैतिक षिक्षा दी जाती है कि चलो बच्चों ताऊजी के चरण छुओं, चाचाजी को प्रणाम करो, सवाल-जवाब मत करो। प्रष्न यह उठता है कि एक षराबी, मवाली, निकृष्ठ, ढ़ीढ़ एवं उपद्रवी ताऊजी या चाचाजी के चरण छूने का क्या फायदा।

14. आदमी, आदमी के चरणों में यदि गिर जाये तो क्या यह मानवाधिकार का पतन नहीं है।

15. ऑफिस के मुख्य प्रवेष द्वार के बाहर द्वारपाल साहब को सैल्यूट मारता है तथा साहब उसके सैल्यूट का जवाब दिए बिना ही प्रवेष कर जाते

www.ignited.in

है। देखा जाए तो साहेब के संस्कार तो उस द्वारपाल जितने भी नहीं है जो कम से कम उसके सैल्यूट का जवाब तो दे।

इन कतिपय प्रष्नों पर हमें गंभीरतापूर्वक चिंतन करना ही होगा।

संदर्भ ग्रंथसूची:-

1. डॉ. बसंतीलाल बाबेल - पुलिस प्रषासन, अन्वेषण तथा मानवाधिकार, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1998
2. डॉ. जी.एस. वाजपेयी - मानवाधिकार और पुलिस, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, नई दिल्ली
3. मोतीलाल गुप्ता - भारतीय समाज, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1997
4. पी.एन. रछौया - भारत सरकार के महत्वपूर्ण अधिनियम एवं नियम, राजस्थान पुलिस अकादमी, जयपुर, 1999
5. डॉ. सुरेन्द्र कटारिया - सामाजिक प्रषासन, आर.बी.एस.ए. पब्लिषर्स, जयपुर, 2016
6. डॉ. सुरेन्द्र कटारिया - मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस, आर.बी.एस.ए. पब्लिषर्स, जयपुर, 2003
7. शंकर सरोलिया - भारतीय पुलिस के नए आयाम, सतगुरू प्रकाषन, जयपुर, 1994
8. जे.एल. थॉमस - पुलिस ऑर्गेनाइजेषन एण्ड एडमिनिस्टेþषन, पुलिस रिव्यू एण्ड पब्लिषिंग कम्पनी, लंदन, 1961

Corresponding Author

डॉ. अविनाश शर्मा*

सहायक आचार्य (लोक प्रशासन), राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.)